



# INTERNATIONAL JOURNAL OF TRENDS IN EMERGING RESEARCH AND DEVELOPMENT

INTERNATIONAL JOURNAL OF TRENDS IN EMERGING RESEARCH AND DEVELOPMENT

Volume 3; Issue 6; 2025; Page No. 173-181

Received: 04-10-2025  
Accepted: 13-11-2025  
Published: 16-11-2025

## जनजातीय समुदायों की दीर्घकालिक आर्थिक स्थिरता बढ़ाने के उपाय सुझाएँ

<sup>1</sup>सौरभ सिंह बघेल, <sup>2</sup>भानु साहू

<sup>1, 2</sup>वाणिज्य विभाग, मध्यांचल प्रोफेशनल यूनिवर्सिटी, भोपाल, मध्य प्रदेश, भारत

DOI: <https://doi.org/10.5281/zenodo.19209437>

Corresponding Author: सौरभ सिंह बघेल

### सारांश

यह शोध इस बात की पड़ताल करता है कि शिक्षा, आर्थिक स्थिति, मीडिया एक्सपोजर, पारंपरिक नेतृत्व और सरकारी कल्याणकारी योजनाएं जैसे कारक जनजातीय मतदाताओं की चुनावी प्राथमिकताओं को कैसे आकार देते हैं। यह यह भी जांचना चाहता है कि क्या जनजातीय मतदाता तेजी से मुद्दा-आधारित मतदान में शामिल हो रहे हैं या क्या पहचान-आधारित जुड़ाव अभी भी उनके राजनीतिक विकल्पों पर हावी हैं। सीधी, मध्य प्रदेश में आदिवासी मतदान पर ध्यान केंद्रित करके, इस अध्ययन का उद्देश्य अधिक संवेदनशील चुनावी रणनीतियों और समावेशी नीति ढाँचों को सूचित करना है जो लोकतांत्रिक प्रक्रिया में हाशिए पर पड़े समुदायों की भागीदारी और आवाज़ को स्वीकार करते हैं। यह शोध प्रबंध सतत विकास सुनिश्चित करते हुए आदिवासी आर्थिक भागीदारी को बढ़ाने के लिए एक व्यापक प्रबंधन ढाँचे का प्रस्ताव करता है।

मूलशब्द: भारत, जनजातीय, आदिवासी, सरकारी और अर्थव्यवस्था

### प्रस्तावना

भारत में दुनिया की सबसे बड़ी जनजातीय आबादी है। यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि 'अनुसूचित जनजातियों' की कोई समरूप श्रेणी नहीं है। प्रत्येक जनजाति की एक अलग पहचान है, प्रत्येक का अपना धर्म, रीति-रिवाज और जीवन शैली है। भारत में 26 राज्यों में 750 से अधिक अनुसूचित जनजातियाँ रहती हैं। अधिकांश जनजातियाँ मध्य और पूर्वी भारत के वन क्षेत्र और पूर्वोत्तर भारत में निवास करती हैं। अनुसूचित जनजातियों के अधिकार भारत के संविधान के अनुच्छेद 19 (5) द्वारा संरक्षित हैं, जहाँ राज्य ने भारत के क्षेत्र में स्वतंत्र रूप से घूमने और किसी भी अनुसूचित जनजाति के हितों की सुरक्षा के लिए भारत के क्षेत्र के

हिस्से में रहने और बसने की स्वतंत्रता पर उचित प्रतिबंध लगाने का अधिकार सुरक्षित रखा है। जनजातियों के हित से संबंधित गतिशीलता और क्षेत्र पर जोर उनके अधिकारों के संबंध में भूमि और क्षेत्र के महत्व को इंगित करता है। संविधान की अनुसूचियाँ (5) और (6) क्रमशः मध्य और पूर्वोत्तर भारत में जनजातीय समुदायों के लिए विशेष प्रावधान हैं।

अन्य समाजों की तरह, आदिवासी समाज भी स्थिर नहीं है, बल्कि काफी गतिशील है। आदिवासी समाज में परिवर्तन बहुत धीमी गति से होता है। यही कारण है कि वे अन्य समुदायों की तुलना में पिछड़े और गरीब रहे हैं। चूँकि वे भौतिक रूप से पिछड़े और आर्थिक रूप से गरीब रहे हैं,

इसलिए सरकार द्वारा उनके विकास के प्रयास किए गए हैं। आज दुनिया भर की सरकारें आदिवासियों के विकास पर विशेष ध्यान दे रही हैं।

आदिवासियों को विश्व की मुख्यधारा से जोड़ने के लिए सरकारों द्वारा अनेक समावेशी नीतियां और कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं। जनजातीय समाज या जीवनशैली अतीत से लेकर वर्तमान समय तक वन सुविधाओं पर निर्भर करती है। जनजातीय लोगों ने वास्तव में सामाजिक नैतिकता और संस्कृतियों पर विजय प्राप्त की। व्यापक रूप से सामाजिक-आर्थिक पहलुओं की स्थिति जैसे अर्थव्यवस्था, स्वास्थ्य, परिवहन, शिक्षा की स्थिति और जीवन की अन्य बुनियादी वस्तुएं। मानव जीवन को बुनियादी स्तर की वस्तुओं जैसे पेयजल, स्वास्थ्य, शिक्षा, आश्रय और अन्य जैसी सार्वजनिक सेवाओं की आवश्यकता होती है। एक जनजाति एक अलग समुदाय है जो एक आम संस्कृति के अभ्यास के साथ राजनीतिक आधिपत्य की ओर चला गया है। अनुसूचित जनजाति शब्द का इस्तेमाल पहली बार भारत के संविधान में पिछड़े वर्गों के लिए कुछ संवैधानिक विशेषाधिकारों और संरक्षण को स्पष्ट करने के लिए किया गया था ताकि जीवनशैली में बदलाव लाया जा सके और सांस्कृतिक नैतिकता को अधीन करने वाली बुनियादी स्थिति में सुधार किया जा सके। हमारे संविधान में, अनुच्छेद 366(25) अनुसूचित जनजातियों या जनजातीय समुदायों या ऐसे जनजातियों के भीतर एक समूह के हिस्से को संविधान के लिए अनुच्छेद 342 के तहत अनुसूचित जनजातियों के रूप में वर्गीकृत करता है। भारत और पश्चिम बंगाल की जनजातीय जनसंख्या 2001-2011 की अवधि के दौरान क्रमशः 17.64% और 13.93% की दर से बढ़ी थी। वर्तमान में अनुसूचित जनजाति जनसंख्या के वितरण के लिए ठोस विचार।

अर्थव्यवस्था किसी भी सामाजिक व्यवस्था की प्रमुख उप-प्रणालियों में से एक है। आदिवासी भारत में समाज कार्य के अभ्यास के लिए आर्थिक व्यवस्था की संरचना और गतिशीलता को समझना आवश्यक है क्योंकि आदिवासी कल्याण की अधिकांश चुनौतियाँ इन्हीं में निहित हैं। दिलचस्प बात यह है कि समाजशास्त्रियों ने दुनिया भर में आदिवासी और गैर-आदिवासी समाजों की आर्थिक संरचनाओं के बीच महत्वपूर्ण अंतर देखे हैं। इसके अलावा, भारत में आदिवासी अर्थव्यवस्थाएँ खाद्य संग्रहण से लेकर औद्योगिक श्रम प्रकारों तक, विभिन्न चरणों में हैं।

## साहित्य की समीक्षा

अपने अध्ययन में उन्होंने कहा कि मौजूदा पाठ्यक्रम आदिवासियों की सामाजिक-आर्थिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि से जुड़े होने चाहिए। अध्ययन में सुझाव दिया गया है कि बेहतर संचार सुविधाएँ, स्वच्छता कार्यक्रम, शिक्षण सामग्री और विधियाँ प्रदान करके सरकार शिक्षा के प्रति आदिवासी आबादी के दृष्टिकोण में बदलाव लाने की उम्मीद कर सकती है।

कुमारी (2014) [1] उन्होंने बताया कि प्राथमिक स्तर पर शिक्षा प्राप्त करने में लड़के और लड़कियों दोनों को कुछ न कुछ बाधाओं का सामना करना पड़ता है। प्राथमिक स्तर पर आदिवासी बच्चों के बीच पढ़ाई छोड़ने के मुख्य कारण स्कूलों का स्थान, भाषा और पाठ्यक्रम, उचित सुविधाओं का अभाव, माता-पिता की लापरवाही और सामाजिक-आर्थिक एवं सांस्कृतिक प्रथाएँ हैं।

पाधी (2014) [4] ने प्रेरणा, जागरूकता की कमी, अभिभावकों की आर्थिक स्थिति, प्रशिक्षित शिक्षकों की कमी, पठन सामग्री, खराब बुनियादी ढाँचे और सुविधाओं का विश्लेषण किया। इसके अलावा, आदिवासी छात्रों की मौसमी अनुपस्थिति या स्कूल न आना और अनुसूचित जनजातियों के लिए एक सुनियोजित शिक्षा प्रणाली का अभाव, अनुसूचित जनजाति के बच्चों में शिक्षा के निम्न स्तर के पीछे के कारण हैं।

शर्मा (2014) [8] ने अपने लेख 'जम्मू और कश्मीर के जम्मू क्षेत्र में गुज्जरो, बकरवालों और गद्दियों में शिक्षा और महिला सशक्तिकरण' में इस बात पर प्रकाश डाला कि महिलाओं की शिक्षा का विकास बहुत धीमा है और इसके परिणामस्वरूप महिलाएँ निरक्षरता, पिछड़ापन और शोषण का शिकार होती हैं। बड़ी संख्या में आदिवासी महिलाएँ विभिन्न चरणों में शिक्षा से वंचित रह जाती हैं और उन्हें सशक्त बनाने के लिए ऐसे अवसर प्रदान करने की सख्त ज़रूरत है जिससे वे आर्थिक आत्मनिर्भरता और सामाजिक परिवर्तन के लिए नेतृत्व के गुण विकसित कर सकें।

गुलज़ार (2021) ने जम्मू और कश्मीर के आदिवासियों के लिए विभिन्न समावेशी उपायों की पड़ताल की है। हालाँकि, केंद्र सरकार और जम्मू और कश्मीर सरकार दोनों ने ग्रामीण और आदिवासी लोगों के लिए विभिन्न सामाजिक-आर्थिक कार्यक्रम शुरू किए हैं। ये कार्यक्रम लाभार्थियों की आय और सामाजिक पहलुओं को आगे बढ़ाने के लिए थे। इन समावेशी उपायों का उद्देश्य आदिवासियों के बीच रोजगार के अवसर

पैदा करना और उन्हें आदिम खेती तकनीकों का विकल्प प्रदान करना है। हालाँकि, 2011 की जनगणना और अन्य अध्ययनों के आँकड़े जम्मू और कश्मीर के गुज्जर आदिवासियों की एक निराशाजनक तस्वीर पेश करते हैं। गुज्जर आदिवासी एक दयनीय जीवन जी रहे हैं और जम्मू-कश्मीर की सामान्य आबादी की तुलना में सामाजिक और आर्थिक रूप से पिछड़े हैं। इस प्रकार, ऐसी व्यवस्था और व्यापक रणनीति बनाने की आवश्यकता है जो गुज्जर आदिवासियों की सामाजिक-आर्थिक स्थितियों को रचनात्मक दृष्टिकोण से बदल सके।

### जनजाति की परिभाषा

"जनजाति" शब्द की उत्पत्ति यूनानी नगर-राज्यों और रोमन साम्राज्य के प्रारंभिक गठन के समय हुई थी। लैटिन शब्द "ट्रिबस" का अर्थ अब "लोगों का एक समूह जो एक समुदाय बनाता है और एक ही पूर्वज से वंश का दावा करता है" हो गया है। भारत का इंपीरियल गेजेटियर, 1911, जनजाति को "एक सामान्य नाम वाले, एक ही बोली बोलने वाले, एक ही क्षेत्र पर कब्ज़ा करने वाले या कब्ज़ा करने का दावा करने वाले परिवारों के समूह" के रूप में परिभाषित करता है और आमतौर पर अंतर्विवाही नहीं होते हैं, हालाँकि मूल रूप से ऐसा रहा होगा।

डी.एन. मजूमदार (1961, 367) द्वारा जनजाति की एक अन्य परिभाषा यह है कि "जनजाति एक सामान्य नाम वाले परिवारों या परिवारों के समूह का एक संग्रह है, जिसके सदस्य एक ही क्षेत्र पर रहते हैं, एक ही भाषा बोलते हैं और विवाह, पेशे या व्यवसाय के संबंध में कुछ वर्जनाओं का पालन करते हैं और दायित्वों की पारस्परिकता और पारस्परिकता की एक अच्छी तरह से मूल्यांकित प्रणाली विकसित की है"।

भारतीय संदर्भ में, जनजाति शब्द को कभी भी संतोषजनक ढंग से परिभाषित नहीं किया गया है। भारत में आदिवासियों को "पिछड़ा वर्ग" माना जाता था और 1919 तक उन्हें "दलित वर्ग" कहा जाता था। भारत की जनगणना में आदिवासियों को अलग-अलग नाम दिए गए, 1931 की जनगणना में उन्हें "आदिम जनजातियाँ", 1941 की जनगणना में "जनजाति" और 1951 की जनगणना में "अनुसूचित जनजातियाँ" कहा गया। भारतीय संविधान में ऐसे समुदायों को "अनुसूचित जनजातियाँ" कहा गया है। हिंदी में, "अनुसूचित जनजातियाँ" के लिए प्रयुक्त समानार्थी शब्द "अनुसूचित जनजाति" है और आदिवासी, वनवासी या

आदिम जाति जैसे अन्य शब्द आदिवासी के पर्यायवाची के रूप में प्रयुक्त होते हैं।

अनुच्छेद 366 (25) अनुसूचित जनजातियों को "ऐसी जनजातियाँ या जनजातीय समुदायों या ऐसी जनजातियाँ या जनजातीय समुदायों के भागों या समूहों" के रूप में परिभाषित करता है जिन्हें अनुच्छेद 342 के अंतर्गत इस संविधान के प्रयोजनों के लिए अनुसूचित जनजातियाँ माना जाता है। अनुच्छेद 342 अनुसूचित जनजातियों के निर्धारण के संबंध में अपनाई जाने वाली प्रक्रिया निर्धारित करता है। किसी समुदाय को अनुसूचित जनजाति के रूप में निर्धारित करने के लिए अपनाए जाने वाले मानदंड आदिम लक्षणों, विशिष्ट संस्कृति, भौगोलिक अलगाव, व्यापक समुदाय से संपर्क में संकोच और पिछड़ेपन के संकेत हैं। यह मानदंड संविधान में स्पष्ट रूप से वर्णित नहीं है, लेकिन यह सुस्थापित हो चुका है।

### भारत की जनजातियाँ

भारत की पहचान अफ्रीका के बाद विश्व में दूसरी सबसे बड़ी जनजातीय आबादी के रूप में है और यह जानना दिलचस्प है कि पूरे भारत में लगभग सात सौ जनजातियाँ निवास करती हैं।

2011 की जनगणना के अनुसार, देश की कुल जनसंख्या में आदिवासियों की हिस्सेदारी 8.61% है। मूल निवासियों की सबसे बड़ी संख्या पूर्वोत्तर भारत के सात राज्यों में पाई जाती है। और तथाकथित "केंद्रीय जनजातीय बेल्ट" राजस्थान से पश्चिम बंगाल तक फैला हुआ। अनुसूचित जनजातियों की आधी से ज़्यादा आबादी मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, महाराष्ट्र, ओडिशा, झारखंड और गुजरात राज्यों में केंद्रित है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 342 के तहत 700 से ज़्यादा अनुसूचित जनजातियाँ अधिसूचित हैं, जो देश के विभिन्न राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों में फैली हुई हैं। कई जनजातियाँ एक से ज़्यादा राज्यों में मौजूद हैं। सबसे ज़्यादा अनुसूचित जनजातियाँ ओडिशा राज्य में हैं। भारत के कुछ प्रमुख जनजातीय समूहों में गोंड, संधाल, खासी, अंगामी, भील, भूटिया और ग्रेट अंडमानी शामिल हैं। इन सभी जनजातीय लोगों की अपनी संस्कृति, परंपरा, भाषा और जीवनशैली है। देश में ऐसी और भी कई जनजातियाँ हैं, जो समाज की मुख्यधारा से अलग रह रही हैं। देश में अनुसूचित जनजाति का दर्जा पाने के लिए कई और जातीय समूह भी हैं, लेकिन उन्हें आधिकारिक तौर पर मान्यता नहीं मिली है।

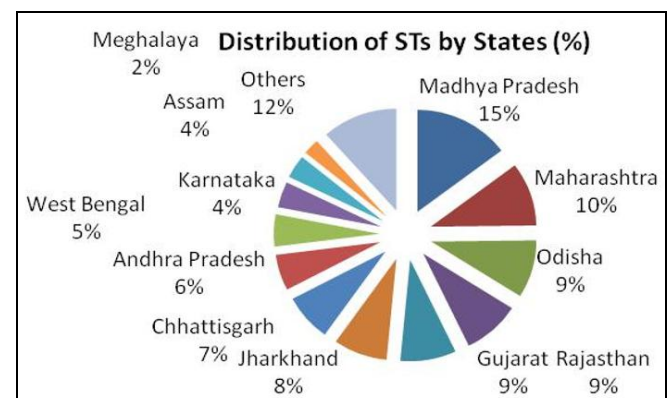
भारतीय संदर्भ में, यह ध्यान देने योग्य है कि रोमन शब्द 'ट्रिब्स' से उत्पन्न 'ट्राइब' शब्द का कोई स्थानीय पर्याय नहीं है। अनादि काल से भारत के जंगलों, पहाड़ियों और सुदूर मैदानी इलाकों में रहने वाले लोगों को वनवासी (वनवासी), आदिवासी (प्रथम बसने वाले), अनुसूचित जनजाति (अनुसूचित जनजातियाँ), आदि नामों से जाना जाता रहा है। ऐसा कहा जाता है कि संस्कृत में एक शब्द है 'आतविकजन', जिसका प्रयोग विशिष्ट क्षेत्रीय, नातेदारी और सांस्कृतिक स्वरूप वाले व्यक्तियों के समूह के लिए किया जाता था। अधिकांश मानवशास्त्रीय लेखन में, 'ट्राइब' नाम का शाब्दिक अर्थ 'मानव' या 'मूल निवासी' होता है। उदाहरण के लिए, असम के नागांव जिले के कार्बी गाँव सोचेंग धेंटा में, यह पता चला कि गाँव का नाम 'सोचेंग धेंटा' कार्बी लोगों के अपने मूल निवास स्थान, यानी कार्बी आंगलोंग जिले से रोंगखोंग पर्वतमाला और अंततः नागांव के पास के मैदानों में प्रारंभिक प्रवास से जुड़ा था। कार्बी बोली में 'सोचेंग धेंटा' गाँव का नाम 'मानव जाति की शुरुआत' है क्योंकि यह गाँव कार्बी संस्कृति का आधार है जिसके अधिकार क्षेत्र में 128 अन्य कार्बी गाँव हैं (लेखक के क्षेत्रीय अनुभव से उद्धृत)। हो का एक और उदाहरण मिश्रा ने उद्धृत किया है जहाँ वे कहते हैं कि छोटानागपुर क्षेत्र या उससे सटे उड़ीसा में रहने वाले हो आदिवासी के लिए मूल भाषा में हो का शाब्दिक अर्थ 'मानव' होता है।

अनुभवजन्य कार्यों के उदाहरणों से यह स्पष्ट है कि 'जनजाति' शब्द भारतीय मूल का नहीं है; आइए अब समझते हैं कि भारतीय संदर्भ में इस शब्द का प्रयोग कैसे हुआ। भारतीय मानवशास्त्रियों ने बार-बार कहा है कि भारतीय संदर्भ में 'जनजाति' शब्द का प्रयोग औपनिवेशिक काल से होता आ रहा है। भारत में ब्रिटिश शासन के दौरान, बेहतर प्रशासनिक उद्देश्यों के लिए, प्रशासकों और मानवशास्त्रियों को भारतीय जनसंख्या के अध्ययन के लिए प्रोत्साहित किया गया और उन्हें इसमें शामिल किया गया। आइए अब समझते हैं कि 'जनजाति' शब्द को आधिकारिक रूप से कब दर्ज किया गया और अंग्रेजों ने भारतीय संदर्भ में इसका प्रयोग कब किया। भारतीय जनसंख्या को दो अलग-अलग समूहों- जनजातियों और जातियों में वर्गीकृत करने की बात भारत की पहली जनगणना 1891 में सामने आई, जो बेन द्वारा तैयार की गई एक रिपोर्ट थी, जिसमें जनजातीय समूहों को "वन जनजातियों" की श्रेणी में रखा गया था, जो "कृषि और पशुचारक जातियों" का एक हिस्सा थीं। उस समय यह जनसंख्या 16 मिलियन अनुमानित की गई थी। रिसले की 1901 की जनगणना रिपोर्ट में धार्मिक

प्रथाओं के आधार पर उनका नाम बदलकर "एनिमिस्ट" कर दिया गया, जबकि गैट की 1911 की जनगणना रिपोर्ट में उन्हें "ट्राइबल एनिमिस्ट" या "ट्राइबल धर्म" का पालन करने वाले लोग कहा गया। हटन ने 1921 की जनगणना रिपोर्ट में 22 मिलियन की आबादी के साथ जनजातियों को "पहाड़ी और वन जनजातियों" के अंतर्गत वर्गीकृत किया। 1931 की जनगणना में उन्हें "आदिम जनजाति" नाम दिया गया। 1935 के भारत सरकार अधिनियम में उन्हें "पिछड़ी जनजाति" कहा गया और 1941 की जनगणना रिपोर्ट में "जनजाति" शब्द का इस्तेमाल किया गया। इस प्रकार, 1891 से भारत की जनगणना के उपरोक्त उद्धरणों से हम देखते हैं कि सांस्कृतिक प्रथाओं, धर्म जिसे मूल रूप से 'एनिमिज्म' कहा जाता है जनजाति-जाति सातत्य और जनजाति-जाति गतिशीलता जैसी अवधारणाओं के मद्देनजर यह सीमांकन समस्याग्रस्त हो जाता है। अगले भाग में, हम इस बात पर विचार करेंगे कि स्वतंत्रता के बाद भारतीय संविधान ने जनजातियों को कैसे परिभाषित किया।

### भारत में जनजातियों का वितरण

अनुसूचित जनजातियाँ 31 राज्यों/केंद्र शासित प्रदेशों में अधिसूचित हैं। 2011 की जनगणना के अनुसार, देश की जनजातीय जनसंख्या 10.43 करोड़ है, जो कुल जनसंख्या का 8.61% है। इनमें से 89.97% ग्रामीण क्षेत्रों में और 10.03% शहरी क्षेत्रों में रहते हैं। 2001 से 2011 की जनगणना के दौरान जनजातीय लोगों की दशकीय जनसंख्या वृद्धि 23.66% रही है, जबकि कुल जनसंख्या में यह वृद्धि 17.69% है।



चित्र 1: अनुसूचित जनजातियों का राज्यवार वितरण (2011 की जनगणना के अनुसार)

मेघालय, मिजोरम और नागालैंड भारत के तीन ऐसे राज्य हैं जहाँ 100% आदिवासी आबादी आदिवासी इलाकों में रहती

है। भारत में 32% आदिवासी क्षेत्र है। भारत की कुल जनसंख्या में लिंगानुपात 1000 पुरुषों पर 940 महिलाएं और अनुसूचित जनजातियों में प्रति हजार पुरुषों पर 990 महिलाएं हैं। जिला स्तर पर, 2011 की जनगणना से पता चलता है कि 90 जिले ऐसे हैं जहां एसटी आबादी 50 प्रतिशत या उससे अधिक है। 2001 की जनगणना के अनुसार यह संख्या 75 जिले थी। इन 90 जिलों में से 48 जिले 8 पूर्वोत्तर राज्यों में हैं। मिजोरम, मेघालय और नागालैंड के सभी जिलों में 60% से अधिक एसटी आबादी रहती है। मध्य प्रदेश में एसटी की सबसे बड़ी संख्या है जो भारत की कुल एसटी आबादी के प्रतिशत में 14.69% का योगदान करती है।

राज्यों में मिजोरम (94.43) में अनुसूचित जनजातियों का अनुपात सबसे अधिक और उत्तर प्रदेश (0.57) में सबसे कम है। केंद्र शासित प्रदेशों में, 94.8 प्रतिशत अनुसूचित जनजाति जनसंख्या के साथ लक्षद्वीप पहले स्थान पर है और दमन और दीव में अनुसूचित जनजातियों का अनुपात सबसे कम (6.32) है। जिलों के संदर्भ में, अरुणाचल प्रदेश के कुरुंगकुमे जिले में अनुसूचित जनजातियों का अनुपात सबसे अधिक (98.58) है और उत्तर प्रदेश के कन्नौज में अनुसूचित जनजातियों का अनुपात सबसे कम (0.0009) है। हरियाणा और पंजाब राज्यों तथा केंद्र शासित प्रदेशों चंडीगढ़, दिल्ली और पुदुचेरी के संबंध में किसी भी समुदाय को अनुसूचित जनजाति के रूप में निर्दिष्ट नहीं किया गया है।

### जनजातीय अर्थव्यवस्था की महत्वपूर्ण विशेषताएँ

आदिवासी समुदायों की सामाजिक-आर्थिक संरचना गैर-आदिवासी या उन्नत समूहों से काफी अलग है। उनके पास एक बहुत ही सरल तकनीक है जो उनके पारिस्थितिक परिवेश और रूढ़िवादी दृष्टिकोण के साथ अच्छी तरह से मेल खाती है। इसके अलावा, उनकी अर्थव्यवस्था को "अत्यंत सरल" कहा जा सकता है। "निर्वाह प्रकार" वे विभिन्न प्रकार के व्यवसाय करते हैं और अपना भरण-पोषण करते हैं तथा उसी पर निर्भर रहते हैं। सीमांत अर्थव्यवस्था जनजातीय अर्थव्यवस्था की कुछ बुनियादी विशेषताएं नीचे दी गई हैं।

1. **लघु अर्थव्यवस्था:** छोटी अर्थव्यवस्था आदिम जीवन की मूलभूत विशेषता है। अधिकांश (परन्तु सभी नहीं) संसाधन, वस्तुएँ और सेवा-लेनदेन एक छोटी अर्थव्यवस्था, भौगोलिक क्षेत्र और सैकड़ों-हजारों लोगों के समुदाय के भीतर होते हैं।
2. **सरल प्रौद्योगिकी:** औद्योगिक अर्थव्यवस्थाओं की

तुलना में, आदिवासी अर्थव्यवस्था में अपनाई जाने वाली तकनीक कहीं अधिक सरल और अपरिष्कृत है। औजार या तो उपयोगकर्ता स्वयं बनाता है या कारीगरों या निर्माण समूहों से शुल्क लेकर प्राप्त करता है।

3. **भौगोलिक या सांस्कृतिक अलगाव:** आदिवासी ज्यादातर एकांत और अलग-थलग इलाकों में रहते हैं और अपनी विशिष्ट सांस्कृतिक विरासत को बनाए रखते हैं। वे आमतौर पर गैर-आदिवासियों के साथ सांस्कृतिक रूप से घुलने-मिलने और अपनी अर्थव्यवस्था के विकास के लिए गैर-आदिवासी अवधारणा को अपनाने में हिचकिचाते हैं।

जनजातीय अर्थव्यवस्था की संरचना सामान्यतः वनों और समुद्रों पर आधारित होती है, और तटीय एवं द्वीपीय जनजातीय अर्थव्यवस्था के लिए वन, आर्थिक और सांस्कृतिक स्तर पर, उत्पादन और उपभोग दोनों की इकाई है। समुदाय स्वयं एक सहकारी इकाई के रूप में कार्य करता है, और किसी गाँव या स्थान में रहने वाले जनजातीय समुदाय आर्थिक रूप से एक-दूसरे पर निर्भर होते हैं। वितरण सामान्यतः उपहार और औपचारिक आदान-प्रदान पर आधारित होता है।

जनजातीय अर्थव्यवस्था में आम तौर पर दो आर्थिक विशेषताएँ प्रचलित हैं: आर्थिक लेन-देन में लाभ की भावना का अभाव और समय-समय पर स्थानीय बाजारों की उपस्थिति।

### इस प्रकार, जनजातीय अर्थव्यवस्था की निम्नलिखित मूलभूत विशेषताओं का उल्लेख किया जा सकता है

1. जंगल-आधारित अर्थव्यवस्था
2. उत्पादन, उपभोग और श्रम के स्वरूप की इकाई के रूप में परिवार
3. सरल तकनीक
4. आर्थिक लेन-देन में लाभ की भावना का अभाव
5. समुदाय; एक सहकारी इकाई
6. उपहार और औपचारिक आदान-प्रदान
7. आवधिक स्थानीय बाजार
8. परस्पर निर्भरता
9. की आर्थिक संस्था 'धनगर' (धनगर शब्द उरांव, मुंडा और हो जैसी जनजातियों के लिए सबसे परिचित शब्द है)।
10. जनजातीय अर्थव्यवस्था में प्रतिस्पर्धा नहीं, बल्कि सहयोग का बोलबाला

इस प्रकार, यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि जनजाति लोगों का एक सामाजिक समूह है जो एक निश्चित क्षेत्र में निवास करता है या एक सामान्य क्षेत्र पर कब्जा करने का दावा करता है, जिसे एक सामान्य नाम से जाना जाता है, जो एक सामान्य बोली बोलता है, एक सामान्य संस्कृति साझा करता है, एक अंतर्जातीय समूह का व्यवहार दर्शाता है, सामान्य वर्जनाओं का पालन करता है, विशिष्ट सामाजिक और राजनीतिक व्यवस्था के तहत एक साथ काम करता है, अपने नेताओं में पूर्ण विश्वास रखता है, और आपसी सहयोग और अंतर-निर्भरता के आधार पर एक आत्मनिर्भर जिला अर्थव्यवस्था में रहता है।

इस पेशे को अपनाने वाली मुख्य जनजातियाँ उत्तर प्रदेश में थारू, माघी खासा, भोक्सा, कोल और भोटिया हैं; झारखंड में मुंडा, हो, ओरांव, तमरिया, कोरवा और संथाल; छत्तीसगढ़ और मध्य प्रदेश में संथाल, पोलिया, भतरा, बैजा और गोंड, तमिलनाडु में बडगा, इरुला, परगा और माल्यदी, आंध्र प्रदेश में बडगा, कोया, इरुला और कोटा; महाराष्ट्र और गुजरात में भील, दुबला, रैवाड़ी, बराली, कोली, धामलिया आदि और राजस्थान में भील, गरासिया और मीना। ये जनजातियाँ द्वारा की जाने वाली तीन मुख्य आर्थिक गतिविधियाँ हैं। आइए एक-एक करके आदिवासी अर्थव्यवस्था की इन सभी बुनियादी विशेषताओं पर चर्चा करें।

### वन आधारित अर्थव्यवस्था

जनजातीय अर्थव्यवस्था वन पारिस्थितिकी में अंतर्निहित है और उसके इर्द-गिर्द घूमती है। न केवल जनजातीय अर्थव्यवस्था, बल्कि संस्कृति और सामाजिक संगठन भी वनों से गुंथे हुए हैं। देश के सभी जनजातीय क्षेत्रों में वन जनजातीय आजीविका के लिए प्रमुख प्राकृतिक संसाधन आधार हैं। आदिवासी अपनी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए वनों पर निर्भर करते हैं। आदिवासी बाहरी दुनिया से अधिक तकनीकी सहायता के बिना सरल उपकरणों की मदद से वन संसाधनों का दोहन करते हैं। वे अपने उपभोग के लिए जंगलों से खाने योग्य जड़ें, फल, सब्जियां, फूल, शहद, कीड़े, मछली, कबूतर, खरगोश, सूअर आदि इकट्ठा करते हैं। देश में जनजातियों की वन पर निर्भरता उनके आर्थिक प्रकार के साथ भिन्न होती है। राय (1967) के अनुसार छोटानागपुर के बिरहोर, आंध्र प्रदेश के चेंचू, उड़ीसा के जुआंग, केरल के कादर

### घरेलू या पारिवारिक उत्पादन पद्धति

भारत की जनजातीय अर्थव्यवस्थाओं में परिवार उपभोग के साथ-साथ उत्पादन की बुनियादी इकाई है। आदिवासियों की

<https://researchtrendsjournal.com>

सरल अर्थव्यवस्था में परिवार के सभी सदस्य मिलकर उत्पादन की इकाई बनाते हैं और उत्पादन और उपभोग की आर्थिक प्रक्रिया में सीधे तौर पर शामिल होते हैं। श्रम और उपज के आवंटन की निर्णय लेने की प्रक्रिया पारिवारिक शर्तों द्वारा नियंत्रित होती है। जनजातीय घरेलू उत्पादन मुख्य रूप से बाजार के बजाय उनकी उपभोग की जरूरतों को पूरा करने के लिए तैयार किया जाता है। इसलिए, जनजातीय अर्थव्यवस्था को निर्वाह अर्थव्यवस्था कहना उचित है। जनजातीय घरों में श्रम का विभाजन बहुत ही साधारण प्रकार की कुल्हाड़ी या दाव के रूप में होता है, जिससे वे झूम खेती के लिए पेड़ों को गिराते हैं, जिसमें कड़ी मेहनत की आवश्यकता होती है। मुंडा, उरांव और भील जैसी कृषि जनजातियों का हल लकड़ी के एक ही टुकड़े से बना होता है

### विनिमय में लाभ की भावना का अभाव

लाभ को अधिकतम करना आर्थिक लेन-देन का मुख्य लक्ष्य है जो आधुनिक पूंजीवादी अर्थव्यवस्थाओं को संचालित करता है। लेकिन भारत की जनजातीय अर्थव्यवस्थाओं में आर्थिक लेन-देन में लाभ की भावना पूरी तरह से अनुपस्थित है। इसके लिए दो प्रमुख संस्थागत कारक जिम्मेदार हैं, अर्थात् जनजातीय अर्थव्यवस्था की सांप्रदायिक प्रकृति और विनिमय के माध्यम के रूप में मुद्रा का अभाव। पारस्परिक दायित्व और साथियों को मुफ्त श्रम के विस्तार के परिणामस्वरूप कोई महत्वपूर्ण अधिशेष नहीं होता है। ऐसा इसलिए भी है क्योंकि वस्तुओं और सेवाओं का आदान-प्रदान मुद्रा के बजाय वस्तु विनिमय प्रणाली से होता है। भारत की जनजातीय अर्थव्यवस्थाओं में विनिमय के माध्यम के रूप में मुद्रा लगभग अनुपस्थित है। इसलिए, वस्तुओं और सेवाओं के मूल्य को मापने और विनिमय प्रक्रिया में उत्पन्न लाभ को भावी पीढ़ी के लिए धन के रूप में संग्रहीत करने की कोई गुंजाइश नहीं है।

### एक सहकारी इकाई के रूप में समुदाय

जनजातीय समाजों में समुदाय एक सहकारी इकाई के रूप में कार्य करता है और आर्थिक गतिविधियाँ सामूहिक रूप से एक समूह के रूप में संचालित होती हैं। डाल्टन (1991) के अनुसार, आदिम अर्थव्यवस्था अन्य सामुदायिक संबंधों में अंतर्निहित होती है। डाल्टन (1991) का मानना था कि निम्न-स्तरीय तकनीक, अर्थव्यवस्था का छोटा आकार और बाहरी दुनिया से इसका सापेक्षिक अलगाव जैसे कारक लोगों के बीच परस्पर निर्भरता को बढ़ावा देते हैं और वे कई सामाजिक संबंधों को साझा करते हैं। वास्तव में, जनजातीय

लोगों की आर्थिक गतिविधियाँ उनके पड़ोस, धर्म, रिश्तेदारी और राजनीतिक संबंधों में अंतर्निहित होती हैं।

आर्थिक अंतःक्रियाओं में, प्रत्येक आदिवासी ग्राम समुदाय को एक सहकारी इकाई माना जाता है। विद्यार्थी और राय (1976) के अनुसार, मुंडा, उरांव, हो, संधाल, गोंड और भील जनजातियों के ग्रामीणों के बीच घनिष्ठ आर्थिक संबंध होते हैं। इनमें से अधिकांश सामान्य आर्थिक गतिविधियों में संलग्न होते हैं, जैसे मवेशी चराना, स्थानांतरित और स्थायी कृषि क्षेत्रों में एक साथ मिलकर काम करना। उनके युवा मिलकर मवेशी चराते हैं और अपने गाँव की रक्षा करते हैं। वयस्क पुरुष और महिलाएँ पारस्परिक आधार पर एक-दूसरे के खेतों में धान की रोपाई और कटाई करते हैं।

सामान्य पारस्परिकता में दी गई सहायता और वापस ली गई सहायता, साझा करना, आतिथ्य सत्कार, लिए गए उपहार, पारस्परिक सहायता और उदारता शामिल हैं। पारस्परिकता की अपेक्षा अनिश्चित होती है और मात्रा, गुणवत्ता और समय के संदर्भ में अनिर्दिष्ट होती है। ये दाता और प्राप्तकर्ता की सुविधा और क्षमता पर छोड़ दिए जाते हैं। संतुलित पारस्परिकता प्रत्यक्ष विनिमय है और प्राप्त वस्तुओं और प्रतिफल का मूल्य समान होना चाहिए। वस्तुओं और सेवाओं के आदान-प्रदान की वस्तु विनिमय प्रणाली इस पारस्परिकता के स्तर का सबसे अच्छा उदाहरण है। सामान्य पारस्परिकता की तुलना में इस प्रकार की पारस्परिकता को अधिक आर्थिक और कम व्यक्तिगत माना जाता है। नकारात्मक पारस्परिकता कुछ भी बिना कुछ दिए पाने का प्रयास है।

मुंडा, उरांव, गोंड आदि कृषि जनजातियों के बीच सामान्यीकृत प्रकार की पारस्परिकता देखी जा सकती है। धान की रोपाई के समय, करीबी और दूर के रिश्तेदार एक साथ आते हैं और एक-दूसरे की मदद करते हैं। इस कृषि कार्य के पूरा होने पर, आमंत्रित लोगों को आतिथ्य के रूप में भोजन और पेय की पेशकश की जाती है। कई जनजातियों के बीच विशेष रूप से कृषि और कारीगर जनजातियों के बीच आर्थिक लेनदेन के मामले में संतुलित पारस्परिकता देखी गई है। उरांव, मुंडा, हो और खनिया जैसी कृषक जनजातियाँ अपने कृषि उपकरणों का निर्माण या मरम्मत लाहर के कारीगर जनजाति से करवाती हैं, जो बदले में वस्तु या नकद के रूप में एक पारंपरिक वार्षिक भुगतान प्राप्त करते हैं। पारस्परिकता का तीसरा रूप अर्थात् नकारात्मक पारस्परिकता अंतर-जनजातीय या अंतर-जनजातीय आर्थिक आदान-प्रदान के बीच मौजूद नहीं देखी गई है। लेकिन यह साप्ताहिक बाजारों में आदिवासियों और

गैर-आदिवासियों के बीच विनिमय संबंधों की विशेषता है बदले में, उन्हें अपने माल के बदले व्यावहारिक रूप से कुछ भी नहीं मिलता। दरअसल, गैर-आदिवासी व्यापारियों और साहूकारों के साथ आर्थिक लेन-देन ने आदिवासी जनता में ऋणग्रस्तता, बंधुआ मजदूरी, भूमि अधिग्रहण और दरिद्रता को बढ़ावा दिया है।

### आवधिक बाजार

बाजार एक प्रमुख आर्थिक संस्था है जो दुनिया भर के लोगों के बीच वस्तुओं और सेवाओं के वितरण को नियंत्रित और सुगम बनाती है। फिर भी, मानवविज्ञानियों ने आदिवासी वैश्विक अर्थव्यवस्था में स्थायी बाजार का अभाव देखा है।

साप्ताहिक बाजार आदिवासी अर्थव्यवस्था को व्यापक राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के साथ एकीकृत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह नवाचार और आदिवासी अर्थव्यवस्था के मुद्रीकरण को बढ़ावा देता है। सिन्हा के अनुसार, बाजार आदिवासी क्षेत्रों में आर्थिक जीवन का केंद्र है। यह क्षेत्र के व्यावसायिक रूप से विविध समुदायों के संसाधनों और भौतिक वस्तुओं के पुनर्वितरण के केंद्र के रूप में कार्य करता है।

### परस्पर निर्भरता

जनजातियों के बीच आर्थिक संबंध को अक्सर अन्योन्याश्रितता माना जाता है, जबकि जनजातीय आर्थिक जीवन में प्रतिस्पर्धा की भावना लगभग अनुपस्थित होती है। जनजातियों के बीच, जनजातियों के भीतर, या जनजातीय लोगों और गैर-जनजातीय लोगों के बीच संबंध कार्यात्मक रूप से अन्योन्याश्रित हैं। विद्यार्थी और राय (1976) का मानना है कि आर्थिक कार्यात्मक अन्योन्याश्रयता जजमानी व्यवस्था के समान है, जो देश के अधिकांश क्षेत्रों में हिंदू जाति समूहों में पाई जाती है। जजमानी व्यवस्था के तहत, एक गाँव के भीतर प्रत्येक जाति समूह से अन्य जातियों के लोगों को कुछ मानकीकृत सेवा देने की अपेक्षा की जाती है। परिवार के मुखिया की सेवा एक व्यक्ति द्वारा की जाती है जिसे जजमान के रूप में जाना जाता है, जबकि कार्य करने वाला पुरुष जजमान का कमीन होता है। देश के विभिन्न जनजातीय क्षेत्रों में जनजातियों के बीच आर्थिक अन्योन्याश्रयता विभिन्न तरीकों से देखी गई है।

जनजातीय आर्थिक परस्पर निर्भरता की इस विशेषता को प्रसिद्ध मानवविज्ञानी हर्सकोविट्स (1952) द्वारा तमिलनाडु के एक उदाहरण से बेहतर ढंग से समझा जा सकता है। हर्सकोविट्स ने नीलगिरि के चार आदिम जनजातीय समूहों,

बडागा, कोटा, टोडा और कुरुम्बा, के बीच कार्यात्मक संबंध का अवलोकन किया है। कोटा कारीगर, कृषक बडागा और पशुपालक टोडा परिवारों की बर्तनों, चाकुओं, लोहे के औजारों और संगीत से सेवा करते हैं और बदले में बडागा से खाद्यान्न और टोडा से दूध उत्पाद, भैंस आदि प्राप्त करते हैं। कुरुम्बा दूसरों को जादुई और अनुष्ठानिक सेवाएँ प्रदान करते हैं और बदले में दूसरों से खाद्यान्न, दूध उत्पाद आदि प्राप्त करते हैं।

### धनगर की आर्थिक संस्था

भारत की कृषक जनजातियों में, मानवविज्ञानियों ने श्रम-आसक्ति की एक विशिष्ट आर्थिक संस्था देखी है। भूमि-स्वामी जनजातियों में श्रम की इस संस्था को अलग-अलग रूपों में जाना जाता है, जो खेती में मानव श्रम और भूमि के प्रभावी उपयोग को सुगम बनाती है। झारखंड की जनजातियों में इसे धनगर कहा जाता है, जबकि पश्चिम बंगाल के भूमिजों में इसे बेगल कहा जाता है। तराई क्षेत्र के थारू, हिमालय के खास और पूर्वोत्तर भारत के रंगमा नागाओं में भी श्रम-आसक्ति और अवशोषण की ऐसी ही संस्था देखी गई है। उदाहरण के लिए, झारखंड में, बड़े आदिवासी ज़मींदार अपनी ज़मीन पर खेती के लिए एक साथी आदिवासी को अर्ध-स्थायी आधार पर नियुक्त करते हैं। वह व्यक्ति उसी जनजाति का होता है और प्रायः उसी गाँव का होता है। राज्य की प्रमुख जनजातियों, उरांव, मुंडा और हो, में इस प्रकार नियुक्त व्यक्ति को धनगर कहा जाता है। धनगर की नियुक्ति आम तौर पर वार्षिक आधार पर की जाती है, लेकिन दोनों पक्षों के बीच संबंधों की प्रकृति के आधार पर यह अवधि और भी लंबी हो सकती है। नियुक्ति के दिन से, उसे ज़मींदार के परिवार के सदस्य के रूप में माना जाता है और उसके साथ समान व्यवहार किया जाता है। ज़मींदार के परिवार में उसे नौकर से ज़्यादा सहायक माना जाता है। नकद या वस्तु के रूप में कुछ वार्षिक भुगतान के अलावा, धनगर को भोजन और रहने की जगह भी दी जाती है। दिलचस्प बात यह है कि अगर वह किसी दूसरे कुल का हो, तो वह ज़मींदार की बेटी या बहन से शादी भी कर सकता है।

### निष्कर्ष

इस प्रकार, राज्य और जिले में अनुसूचित जनजातियों पर ध्यान केंद्रित करने की आवश्यकता है। जनजातीय समाज के विकास के लिए एकीकृत नीति तैयार करने की

आवश्यकता है। अध्ययन के प्रमुख निष्कर्ष बताते हैं कि संवैधानिक सुरक्षा कानून; जीसीसी, भारत आदिवासी विकास संघ (आईटीडीए), उप-योजना योजना जैसी नई विकास योजनाओं / एजेंसियों की शुरुआत, उप-योजना योजना, केंद्र और राज्य सरकार दोनों की क्रमिक पंचवर्षीय योजनाओं में पर्याप्त वित्तीय प्रावधानों ने मध्य प्रदेश के सीधी जिले में रहने वाले अनुसूचित जनजातियों के सामाजिक-आर्थिक पैटर्न में सुधार और परिवर्तन किया है। हालांकि, सीधी जिले में आवास के संबंध में सामाजिक-आर्थिक स्थितियों में सुधार महत्वपूर्ण नहीं हुआ है। इसका मतलब है कि परिवर्तन एजेंटों और आधुनिक बुनियादी सुविधाओं के उन बदलावों ने जनजातियों के जीवन स्तर में संरचनात्मक परिवर्तन के प्रत्याशित स्तर को हासिल नहीं किया। अवलोकन के आधार पर अनुसूचित जनजातियाँ सीधी जिले में शिक्षा, स्वास्थ्य, स्वच्छता, सामाजिक-आर्थिक सुविधाओं जैसी समस्याओं का सामना कर रही हैं अध्ययन क्षेत्र में अनुसूचित जनजातियों को बढ़ावा देना सरकार की जिम्मेदारी है, न कि केवल जनजातियों की समस्याओं पर काबू पाना।

### संदर्भ

1. कुमारी, एन के. प्राथमिक शिक्षा प्राप्त करने में आदिवासी छात्रों के सामने आने वाली बाधाएँ। In: लोखंडे, धनंजय; गुप्ता, पुव्वदा विश्वनाथ, संपादक। आदिवासी शिक्षा के परिप्रेक्ष्य. नई दिल्ली: डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस प्राइवेट लिमिटेड; 2014। पृ. 87-99।
2. लोखंडे, धनंजय; गुप्ता, पुव्वदा विश्वनाथ, संपादक। आदिवासी शिक्षा के परिप्रेक्ष्य. नई दिल्ली: डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस प्राइवेट लिमिटेड; 2014।
3. महापात्रा, एस के. भारत में अनुसूचित जनजातियों की शिक्षा: एक सांस्कृतिक और शैक्षणिक अन्वेषण। मंगलमय जर्नल ऑफ एजुकेशन एंड पेडागॉजी. 2010;1:94-101।
4. पाधी, एस के. सरकारी और निजी स्कूलों में आदिवासी बच्चों की प्रारंभिक शिक्षा: सुगम्यता, सामर्थ्य और स्वीकार्यता का प्रश्न। In: लोखंडे, धनंजय; गुप्ता, पुव्वदा विश्वनाथ, संपादक। आदिवासी शिक्षा के परिप्रेक्ष्य. नई दिल्ली: डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस प्राइवेट लिमिटेड; 2014। पृ. 147-160।
5. प्रसाद, वी डी; राव, डी बी. आदिवासी छात्राओं की समस्याएँ. नई दिल्ली: डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस प्राइवेट लिमिटेड; 2014।

6. रामचंद्रन, आर; दीपन, वी. भारत में अनुसूचित जनजातियों की शैक्षिक स्थिति। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ टेक्निकल रिसर्च एंड साइंस. 2017;2(X):632-636।
7. साहू, पी. भारत में अनुसूचित जनजातियों की शैक्षिक स्थिति। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ रिसर्च इन सोशल साइंसेज. 2019;9(10):193-201।
8. शर्मा, वी. जम्मू और कश्मीर के जम्मू क्षेत्र में गुज्जरो, बकरवालों और गदियों में शिक्षा और महिला सशक्तिकरण। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ रिसर्च. 2014;1(4):452-467।
9. सिंह, ए. अर्ध-घुमंतू गदियों के शैक्षिक पिछड़ेपन के कारणों को समझना: डोडा ज़िला (जम्मू-कश्मीर) का एक केस स्टडी। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ रिसर्च. 2014;1(11):1547-1554।
10. सिंह, जी; सिंह, बी. भारत में अनुसूचित जनजातियों की शिक्षा। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एडवांस रिसर्च इन साइंस एंड इंजीनियरिंग. 2018;7(4):1753-1760।
11. सोफी, यूजे. जम्मू और कश्मीर के आदिवासियों की शैक्षिक स्थिति: गुज्जरो और बकरवालों का एक मामला। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ सोशल साइंस. 2014;3(3):275-284।
12. सुजाता, के. अनुसूचित जनजातियों में शिक्षा। In: भारत शिक्षा रिपोर्ट. 1994।
13. वल्लपुरेड्डी, एम. आदिवासी क्षेत्रों में शैक्षिक सुविधाएँ और स्कूल छोड़ने वाले बच्चे: आंध्र प्रदेश में एक जिला स्तरीय विश्लेषण। In: लोखंडे, धनंजय; गुप्ता, पुव्वदा विश्वनाथ, संपादक। आदिवासी शिक्षा के परिप्रेक्ष्य. नई दिल्ली: डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस प्राइवेट लिमिटेड; 2014। पृ. 38-65।
14. वानी, एमवाई; इस्लाम, आरटी. जम्मू और कश्मीर के आदिवासियों की शैक्षिक स्थिति: ज़िला पुलवामा में गुज्जरो और बकरवालों का एक केस स्टडी। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ रिसर्च. 2018;5(4):865-877।
15. यदुप्पनवर, ए वी. भारत में जनजातीय शिक्षा. नई दिल्ली: डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस प्राइवेट लिमिटेड; 2012।

#### Creative Commons (CC) License

This article is an open access article distributed under the terms and conditions of the Creative Commons Attribution (CC BY 4.0) license. This license permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original author and source are credited.